Approved by UGC
Journal No. 48923
Letter No. : NSL/ISSN/INF/2014/461

ISSN 2348-4624
IIJ Impact Factor No. : 2.695

Śodha Mīmāṁsā

An International Refereed Research Journal

Year-V | No. XVII, Issues-VII | January-March, 2018

Editor in Chief

Dr. Rakesh Kumar Maurya

Associate Editor

Dr. Anish Kumar Verma
Dr. Devi Prabha

Published by :

Kusum Jankalyan Samiti
Deoria, U.P. (INDIA)

मधुमति के सामाजिक सांस्कृतिक पक्षों का अवलोकन 139–141
सुनील कुमार व डॉ० जे०पी० सिंह

नागार्जुन की कविताओं में लोक जीवन एवं लोक राग 142–145
डॉ० रेनू दुग्गल

साहित्ये महाभारतस्य प्रबन्धनव्यवस्था 146–147
डॉ० हर्षानन्द उनियाल

पद्म भूषण आचार्य पं० बलदेव उपाध्याय का हिन्दी साहित्य को योगदान 148–149
महेन्द्र कुमार यादव

मानसिक तनावों में खेल एवं संगीत का चिकित्सीय महत्व 150–151
डॉ० अनिल कुमार मिश्र

सामाजिक चेतना के अगुआ–रैदास 152–153
डॉ० ऋचा सिंह

त्रिविध शरीर : अद्वैत वेदान्त के आलोक में 154–156
दीपिका कुमारी

वेदव्यास प्रणीत खिलभाग–हरिवंशपुराण में अलंकार सौन्दर्य 157–159
डॉ० सिद्धनाथ खजूरिया

आचार्य गौडपाद के अनुसार आत्मतत्त्व–विवेचन 160–160
अवधेश कुमार पाण्डेय

प्राचीन भारत में स्थल यातायात के संसाधन : एक संक्षिप्त विश्लेषण 161–162
पूर्णिमा सिंह

ग्रामीण विकास और भारतीय नारी 163–165
डॉ० मनोज कुमार सिनसिनवार

काव्यशास्त्र में काव्यप्रयोजनविमर्श 166–167
अनुपम सिंह

घेरण्डसंहिता–प्रतिपादित धौतिकर्म–विमर्श 168–169
लाखेश्वरनाथ पाण्डेय

न्याय तथा वैशेषिक दर्शन : एक समन्वयात्मक दृष्टि 170–171
डॉ० शिल्पी श्रीवास्तव

भास के नाट्य कला का कालिदास पर प्रभाव 172–173
अपर्णेश कुमार शुक्ल

बृहत्त्रयी में दार्शनिक अवधारणा 174–174
डॉ० समीर श्रीवास्तव

उत्तराखण्ड के जौनसार–बावर जनजाति : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 175–176
डॉ० मधुमिता भट्टाचार्या

जैनयोग : एक दार्शनिक अनुशीलन 177–179
डॉ० अनिल कुमार सोनकर

वेदों में मानवीय समानता 180–182
डॉ० विमलेश कुमार सिंह यादव

संस्कृत काव्यशास्त्र में अभिधा–विमर्श 183–185
दीपिका सिंह

शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति 186–187
श्यामचन्द्र शर्मा

तानसेन और ब्रजभाषा में सोलहवीं शताब्दी से आ रही ध्रुवपद के पदों की परम्परा 188–189
डॉ० दीप्ति सिंह

प्रोफेसर आर०एस० धीर की कला का सृजनात्मक आयाम 190–192
डॉ० नरेन्द्र सिंह

सौन्दर्यात्मक दृष्टि से चम्बा भित्तिचित्र वैभव 193–195
डॉ० रवीश कुमार

ज्यवाद–उपनिवेशवाद बनाम दासप्रथा–गिरमिटियाप्रथा के ऐतिहासिक संदर्भों का विश्लेषणात्मक अध्ययन 196–198
डॉ० जयश्री मिश्रा

♦♦♦

...ISSN 2348-1624
...ISSN/INT 2014-161
...Jankalyan Samiti Deoria, U.P (INDIA)
...8923

II Impact Factor 7.695
Year V, No XVII, Issue VII
January March 2018
Page No 188-189

...न और ब्रजभाषा में सोलहवीं शताब्दी से आ रही ध्रुवपद के पदों की परम्परा

डॉ0 दीप्ति सिंह*

*एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत विभाग, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर, उ0प्र0

...शताब्दी में उत्तर भारत में कृष्णभक्ति के पुर्नजागरण ...प्रिय साहित्य और आंचलिक हिन्दू शासकों तथा ...के दरबार से जुड़ा काव्य–इन दोनों ने एक दूसरे ...। कृष्णभक्त कवि और दरबारी कवि, इन दोनों को ...थे, वे वाग्गेयकार, जिन्होंने ब्रजभाषा को अपनी ...माध्यम बनाया। यद्यपि ये वाग्गेयकार अल्पज्ञात हैं, ...की रचनायें मौखिक परम्परा में सुरक्षित रही हैं और ...जाती हैं।

...के कवियों की प्रतिभा की साक्षी जो रचनायें हैं, उनमें ...और दरबारी–काव्य विशेष रूप से ध्यान आकर्षित ...ख्य गीत बज की पुण्य–भूमि के मन्दिरों में गाने के ...हिन्दू–मुस्लिम शासकों के यशोगान के लिए रचे गये। ...शासक प्रायः संगीत के पारखी होते थे और अपनी ...में गायक–कवियों अर्थात् वाग्गेयकारों को प्रोत्साहित

...षा में रचित गेयपद और लक्षणबद्ध संगीत (तज ...गम का केन्द्र था मध्यदेश, जिसमें ग्वालियर, आगरा ...श आते थे। इस क्षेत्र में अनेकानेक गुणी सोलहवीं ...उत्पन्न हुए, जिन्हें उक्त दोनों परम्पराओं की विरासत ...न्द्रहवीं शताब्दी के अन्त में ग्वालियर की राजसभा में ...नसिंह तोमर (राज्य 1486–1516) से विशेष प्रोत्साहन ...के फलस्वरूप उनके आश्रित गुणियों द्वारा वहां की ...पदों की रचना हुई। मध्यदेशीय भाषा, जिसे कि बाद ...नाम, दिया गया, की अनूठी संगीतात्मकता ने ही उसे समस्त उत्तर–भारत में गेय पदों का माध्यम होने का ...र दिलाया था। ध्रुपद इन पदों की गेय विधा था। ...में उस काल का विपुल साहित्य उपलब्ध है जिससे ...श्रयदाता की जानकारी मिलती है। अभी तक इस ...विशेष अध्ययन नहीं हुआ है।

...बख्शू और तानसेन उस काल के सबसे अधिक ...हैं। दोनों को भक्तिकाव्य और श्रृंगारकाव्य की विरासत ...नकी रचनाओं का काव्य की दृष्टि से मूल्यांकन नहीं ...र लक्षणबद्ध संगीत (तज उनेपब) के पद भण्डार के ...दृष्टि से भी इन पर अभी पूरा ध्यान नहीं गया है। ...म्बित तत्कालीन संरक्षण–पोषण की व्यवस्था का भी ...भी शेष है।

...लेख डॉ0 फ्रांस्वाज देल्वुआ (नलिनी) के पेरिस ...Nauvelle विश्वविद्यालय में किये गये डी0लिट् के ...पर किये गये विमर्श एवं चर्चा पर आधारित है। इसमें ...निर्देशक प्रो0 शार्लट बाउदविले का बड़ा सहयोग रहा, इतनी महत्वपूर्ण मौलिक जानकारी संगीत की दुनिया से साझा करना अत्यावश्यक लगा।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का आधार लिखित और चित्रात्मक स्रोत है, जिनसे कि सोलहवीं शताब्दी के लक्षणबद्ध संगीत, विशेषतः ध्रुपद और तानसेन का अध्ययन सम्भव हो पाया है। तानसेन मध्यकालीन भारत के सुविख्यात गायक और वाग्गेयकार हैं, जिन्हें सम्राट अकबर (राज्य 1556–1605) का प्रश्रय प्राप्त था। कथ्य शोध–प्रबन्ध के दो भाग हैं, पहले में ध्रुपद के ऐतिहासिक और साहित्यिक पदों पर विचार है। प्रथम अध्याय में संस्कृत और फारसी के ऐसे लेखनों का विवरण है, जिनमें ध्रुपद का उल्लेख सयाजशास्त्रीय अथवा संगीतशास्त्रीय दृष्टि से मिलता है। संस्कृत के संगीतशास्त्र के ग्रन्थों में जो शास्त्रीय जानकारी है, उसके पूरक हैं फारसी दस्तावेज जिनमें तथ्यपरक विवरण है। इससे यह स्पष्ट होता है कि ध्रुपद का लक्षण केवल सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में रचित संस्कृत शास्त्र–ग्रन्थों में ही नहीं मिलता, बल्कि फारसी की रचनाओं में उससे कम से कम एक शताब्दी पहले इस गीतविधा का उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त क्षेत्रीय भाषाओं में प्राप्त लेखनों से भी तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों की जानकारी निकाली जा सकती है। आज के संगीतकारों को प्राप्त मौखिक–परम्परा भी इस अध्ययन का मूल्यवान स्रोत है।

ध्रुपद पर आधुनिक लेखनों की समीक्षा भी की गई है। बहुत बार आज के लेखक मध्यकालीन संगीत पर लिखते समय फारसी स्रोतों को देखे बिना केवल वैष्णव सन्त–चरितों के आधार पर ध्रुपद का इतिहास लिख देते हैं।

दूसरे अध्याय में ध्रुपद पर काव्यविधा की दृष्टि से विचार है। यह पक्ष प्रायः अनदेखा रह जाता है। भारतीय संगीत में पद का विशेष महत्त्व है और ध्रुपद इसका ज्वलन्त उदाहरण है। ध्रुपद के पदों रचयिता स्वयं अच्छे गायक थे। इसलिए गेय पद और गानविधा के बीच सौन्दर्यशास्त्रीय सम्बन्ध सहज रूप से निष्पन्न हुआ है।

भक्ति की प्रेरणा बने पद–संग्रह और दरबारी पद–संग्रह जिनका उद्देश्य या तो संगीतशास्त्र के प्रतिपादन के उदाहरण प्रस्तुत करना था या परम्परागत पदों को विस्मृति से बचाना था–इन दोनों में ध्रुपद के पद मिलते हैं। इसी से आश्रयदाताओं का ध्रुपद में स्थायी अभिनिवेश प्रमाणित होता है। इन गेय पदों की अधिकांश पाण्डुलिपियों में ही सुरक्षित है और पाठ–संशोधन तो बहुत कम का ही हुआ है। उन्नीसवीं शताब्दी में संकलित और लीथोग्राफी से मुद्रित कुछ संग्रह उपलब्ध हैं जिनका बाद में मुद्रण हुआ है। इन संग्रहों का काव्य की दृष्टि से उपयोग अवश्य हुआ है। उनमें प्रमुख है, कृष्णानन्द व्यास का रागकल्पद्रुम। इनका सम्पादन बहुत सदोष हुआ है। लेखिका ने पाण्डुलिपियों, लीथोग्राफ

[illegible] मूल [illegible] से [illegible] किया है। इस कार्य से कई [illegible] उभर कर सामने आई है :

1. सूरदास [illegible] विख्यात कवि के पदों की प्रामाणिकता निर्धारित करने में जैसी समस्यायें आती हैं, कुछ वैसी ही यहाँ भी उठती हैं।

2. अधिकाश गेय पदो के लिखित रूप काफी बाद मे तैयार हुए हैं। उनकी अपनी समस्यायें है। मौखिक परम्परा में जहाँ गायकी की सुरक्षा कुछ कम निश्चित रहती है, वहाँ गेय पद के भ्रष्ट होने की बड़ी गुञ्जाईश होती है।

3. रचनाकारों की पहचान करना भी अत्यन्त कठिन है। छाप को प्रमाण नहीं माना जा सकता, क्योंकि कई बार प्रायः एक–से पदों पर भिन्न–भिन्न छाप मिलती हैं। भाषा, शैली या विषयवस्तु किसी से भी रचयिता की पहचान बनाना कठिन होता है।

फ़ारसी लेखकों ने ध्रुपद के पद को 'भाषा' में रचित बताया है। उत्तर भारत में भाषा शब्द हिन्दी के तत्कालीन रूप के लिए प्रयुक्त होता रहा है। यह लोक में प्रयुक्त भाषा है जो संस्कृत से भिन्न है। पद की भाषा के महत्त्व को लेकर जो उल्लेख फ़ारसी लेखकों ने किये हैं, उनसे पता चलता है कि फ़ारस की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से सम्बद्ध शासक 'भाषा' को भली–भाँति समझते थे। इसका अच्छा उदाहरण है—नायक बख्शू, जिसके पदों का सङ्कलन, मौखिक परम्परा के आधार पर, शाहजहाँ (राज्य 1628–1658) ने प्रायः डेढ़ सौ वर्ष बाद कराया था।

ध्रुपद को केवल भक्तिपरक गेय विधा नहीं कहा जा सकता, यद्यपि कई ध्रुपद–पदों की ब्रज के भक्त कवियों की रचनाओं के साथ समानता दिखाई देती है। प्रायः ध्रुपद और विष्णुपद को एक मान लिया जाता है। इन दोनों में समानता तो है, किन्तु दोनों की प्रेरणा के स्रोत, सांस्कृतिक सन्दर्भ और भूमिकाएँ भिन्न हैं।

शोध–प्रबन्ध का दूसरा खण्ड तानसेन पर केन्द्रित है। यह नाम इतिहास और सन्तचरित, दोनों में आता है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में पं० भातखण्डे ने इस बात पर जोर दिया कि तानसेन की जीवनी का पुनरुद्धार होना चाहिए, किन्तु आजतक कोई समीक्षात्मक काम इस दिशा में नहीं हुआ।

तानसेन का गायक रूप ही जनमानस में अधिक उभरा है और उनकी काव्यप्रतिभा पर प्रायः ध्यान नहीं गया है। लेखिका ने, उनके कार्य के साहित्यिक मूल्य को लेकर जो परवर्ती उल्लेख मिलते हैं, उनके सहारे इस अछूते पक्ष को अध्ययन करने का यत्न किया है। तानसेन को लेकर किंवदन्तियाँ आज भी उतनी ही सजीव हैं, जितने कि उनके रचित पद आज के संगीत में जीवित हैं।

संस्कृत, फ़ारसी और देशी भाषाओं के लिखित स्रोतों और तानसेन के अकेले या समूहगत चित्रों की समीक्षा से उनकी जीवनी पर आलोचनात्मक विचार इस खण्ड में हुआ है। उनके जीवन–चरित हाल में प्रकाशित हुए हैं, वे सन्तचरित के समान कुछ अछूते स्रोतों का उपयोग भी किया गया है।

संगीतशास्त्र पर तानसेन के नाम से ब्रजभाषा में तीन लघु रचनायें प्रचलित हैं, किन्तु उन्हें आज के संगीत–शास्त्र के विद्वान् प्रामाणिक नहीं मानते।

तानसेन की छाप से [illegible] ध्रुपद [illegible] में मिलते हैं, जिनके [illegible] और स्वरूप भिन्न हैं। इन सब का विवरण द्वितीय अध्याय में है।

तानसेन की छाप वाले कुछ चुने हुए पदों का मूलपाठ और फ्रेन्च अनुवाद के साथ दिया गया है। इन पदों को उनके रचना–कार्य का प्रतिनिधि माना गया है।

भावी शोध की सम्भावनाएँ : ध्रुपद और तानसेन पर प्रस्तुत कार्य से भावी शोध के लिए कुछ दिशाओं की सूझ मिली है। यथा

1. ध्रुपद और तानसेन को लेकर जितने स्रोत उपलब्ध हुए हैं, उनमें भारत के मध्यदेश का महत्त्व उभर कर सामने आता है। मध्यदेश की सांस्कृतिक और कलात्मक राजधानी ग्वालियर थी। इससे ब्रजभाषा की भौगोलिक और सांस्कृतिक सीमाओं को विस्तार मिलता है। तानसेन के नाम से संकलित पदों के साथ–साथ हजारों अन्य पद मिलते हैं, जिनपर भिन्न–भिन्न दरबारी कवियों की छाप है। ब्रजभाषा में रचे अनेकों पद गुजराती और बंगला लिपियों में प्रकाशित संग्रहों में हैं। इन सब पर प्रायः कोई काम नहीं हुआ है। तानसेन पर जैसा काम नलिनी जी के शोध–प्रबन्ध में हुआ है वैसा ही नायक बख्शू, जगन्नाथ कवि राय जैसे दरबारो कवियों पर भी हो सकता है। उसी प्रकार बाज बहादुर और इब्राहीम आदिल शाह जैसे रचनाकार जो कि स्वयं आश्रयदाता भी थे, भी अध्ययन के पात्र हैं। ध्रुपद के पदों का सम्पादन हो जाने पर ब्रजभाषा और उससे सम्बद्ध साहित्य का भाषा, शैली आदि की दृष्टि से गम्भीर अध्ययन सम्भव होगा।

2. ब्रज प्रदेश में कृष्णभक्ति के पुनर्जागरण की प्रेरणा से जो वार्ता–साहित्य बना, वह संगीत के लिए एक महत्त्वपूर्ण लिखित स्रोत है। जनश्रुति पर आधारित यह साहित्य पुनः जनश्रुति की प्रेरणा बना। इसका भी उचित अध्ययन अपेक्षित है।

3. मध्यकालीन संगीत से जुड़े लिखित स्रोतों में ऐसे फ़ारसी लेखकों का सन्धान मिला है जो कि भारत में प्रचलित भारतीय और फ़ारसी संगीत की परम्पराओं में रुचि रखते थे। जैसे ध्रुपद के सम्बन्ध में इनका लेखन भारतीय संगीत के तकनीकी, सौन्दर्यशास्त्रीय और सामाजिक पक्षों पर प्रकाश डालता है, वैसे ही अन्य गीतविधाओं और वाद्यों पर भी इनकी लिखित सामग्री की खोज होनी चाहिए।

4. संस्कृत, देशी भाषाओं और फ़ारसी में जो संगीत–सम्बन्धी सामग्री संगृहीत है उससे एक बहुभाषीय पारिभाषिक शब्दकोष की आवश्यकता प्रतीत होती है, जिससे कि पारिभाषिक शब्दों की विभिन्न पृष्ठभूमियां सामने आ सकें।

5. तानसेन सरीखे दरबारी गायक के फतहपुर सिकरी के सलीम चिश्ती जैसे सूफ़ी सन्तों के साथ सम्बन्धों की चर्चा भी नलिनी जी के शोध–प्रबन्ध में हुई है। कुछ फ़ारसी लेखकों ने ऐसा सङ्केत दिया है कि कुछ दरबारी गायकों का कृष्णभक्तों के साथ सम्बन्ध था, सूफ़ी संस्थानों के साथ तो था ही। ऐसे भी उल्लेख मिलते हैं कि सूफ़ी संस्थानों में ब्रज के ध्रुपदों का उपयोग होता था। इन सब सम्बन्धों का अध्ययन आवश्यक है जिससे कि सूफ़ी संगीत, दरबारी संगीत और कृष्णभक्ति संगीत के बीच सम्बन्धों पर प्रकाश पड़ सकता है।

◆◆◆